International Journal of Applied Research 2015; 1(7): 139-141

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 5.2
IJAR 2015; 1(7): 139-141
www.allresearchjournal.com
Received: 24-04-2015
Accepted: 22-05-2015

डॉ. शिव दत्त शर्मा
अध्यक्ष हिंदी विभाग सहायक प्राध्यापक रा. महा. वि. ढलियारा कांगड़ा हि. प्र.

Correspondence:
डॉ. शिव दत्त शर्मा
अध्यक्ष हिंदी विभाग सहायक प्राध्यापक रा. महा. वि. ढलियारा कांगड़ा हि. प्र.

परम्परागत साधना के परिप्रेक्ष्य में कबीर और रविदास वाणी

डॉ. शिव दत्त शर्मा

संत कबीर और रविदास पूर्ववर्ती विभिन्न दर्शनों,सम्प्रदायों से अप्रभावित नहीं रहे, बल्कि कुछ न कुछ प्रभाव उनकी वाणी, दर्शन और चिन्तन पद्धति पर अवश्य दिखाई देता है संत कबीर और रविदास निरक्षर होते हुए भी विलक्षण प्रतिभा के स्वामी थे । स्वयं को उच्चतम अथवा श्रेष्ठ कहने वाले वर्ग को उन्होंने अपनी प्रतिभा व चिन्तन से बहुत पीछे धकेल दिया था । उनमें चिन्तन की एक सबसे वड़ी विशेषता थी कि उन्होंने विभिन्न वादों और विरोधी तत्वों का समन्वय किया तथा एक समान्जस्य की भाव–भूमि को तैयार किया ।

सिद्ध साहित्य का भक्ति पद्धति पर प्रभाव रहा, कबीर और रविदास परोक्ष अथवा अपरोक्ष रूप से इससे प्रभावित हुए बिना नही रहे । कबीर और रविदास ने विशेषतः कबीर ने रूपक, प्रतीक,उल्टवासी,मुक्तक,जनभाषा आदि का प्रयोग अपनी रचनाओं में किया है । संत रविदास भी इस दृष्टि से उनसे पीछे नहीं हैं [1]।

वर्णव्यवस्था का विरोध दोनो के ही पदों में सर्वव्यापक है । हांलाकि संत रविदास का स्वर विनम्र है जबकि कबीर की भाषा कर्कश,कठोर एवं आक्रोश पूर्ण है ।

इसी तरह नाथ पंथ का प्रभाव भी भक्ति पद्धति पर स्पष्ट है [2]। कबीर ने अपने काव्य में नाथ पंथियों के अतिशयोक्ति पूर्ण प्रभाव को कम करने के लिए तथा उनके द्वारा प्रयुक्त पारिभाषिक शब्दावली इड़ा पिंगला, सुषम्ना, कुंडलिनी आदि का प्रयोग नए रूप में किया है । संत रविदास ने भी यथास्थान इसी प्रकार प्रयोग किया, [3] परन्तु कबीर की तुलना में कम है । नाथपथिंयों में चमत्कार व आडम्बरपूर्ण भक्ति अधिक प्रचलित थी परन्तु कबीर और संत रविदास ने जनता को सहज साधना की ओर प्रवृत्त किया । इसे उनकी मौलिक देन कहां जा सकता है ।

भक्ति का आधार भारतीय दर्शन में वैष्णव मत को माना जाता है । भक्ति की विभिन्न पद्धतियों दशधा एवं नवधा भक्ति के दर्शन वैष्णव धर्मावलम्बी साधकों में प्रायः भिन्न होते है । परन्तु भक्ति की इस विशाल परम्परा में संत कबीर और रविदास ने प्रभावित होकर राम, हरि, गोविन्द आदि का प्रयोग किया [4]। परन्तु वे कट्टर न होते हुए साथ ही अल्लाह, खुदा का भी प्रयोग करते थे । संत रविदास वाणी में भी इसी प्रकार के प्रयोग इस का उदाहरण हैं ।

रामानन्द और अन्य वैष्णव आचार्यों के द्वारा कहे गए राम से कबीर और रविदास भिन्न विचार रखते थे । यद्यपि उन्होंने सभी धर्मों में व्याप्त आडम्बरवादी प्रवृत्ति का घोर विरोध एवं खंडन किया परन्तु फिर भी वैष्णव भक्ति के प्रति उनमें श्रद्धा का अभाव नहीं था–कबीर के इस पद में इसका स्पष्ट प्रभाव मिलता है –

मेरे संगी दुइ जनां, इक वैष्णव इक राम । [5]
वो है दाता मुक्ति का, वो सुमिरावे नाम ।।

संत रविदास वाणी में भी इसी तरह के भाव संत रविदास के मिलते हैं–

इसके अतिरिक्त महाराष्ट्रीय संतों की भक्ति का भी प्रभाव परवर्ती भक्ति पद्धति पर दिखाई देता है । इस समुदाय में समर्थित अद्वैत भावना,मूर्ति पूजा का विरोध गुरू महिंमा, जातिपाति के विरूद्ध अनेक प्रवृत्तियां कबीर और संत रविदास वाणी में दिखाई देती हैं [6]।

इसी तरह इस्लामी एकेशवरवाद का भी थोड़ा बहुत प्रभाव कबीर वाणी में दिखाई देता है [7]। उनकी वाणी में निर्गुणोपासना, वर्णव्यवस्था एवं मूर्तिपूजा का विरोध इस्लामी प्रवृत्तियों का प्रभाव दिखाई देता है परन्तु केवल इसी से उन्हें इस्लाम प्रभावित मान लेना एक भ्रान्ति होगी । उन्होंने तो सभी धर्मों की वाहय प्रवृत्तियों का विरोध एक स्वर से किया है ।

संत रविदास भी इससे अछूते नहीं रहे उनकी वाणी में भी इसी प्रकार के प्रभाव दिखाई देते हैं । सूफीवाद का भी भक्ति पद्धति पर प्रभाव रहा । सूफीवाद में प्रेम तत्व प्रमुखता से अभिव्यक्त हुआ

है [8]। प्रेम को ही ईश्वर माना गया है । संत कबीर और रविदास का प्रेम तत्व सूफीवाद से प्रभावित न होकर उनका मौलिकता से भरपूर है ।

सूफियों ने खुदा को प्रेयसी और जीवात्मा को प्रिय माना है । संत रविदास और कबीर ने अपने आप को खुदा की बहुरिया जगह–जगह पदों में व्यक्त किया ।

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने भक्ति की परिभाषा देते हुए कहा है कि श्रद्धा प्रेम के योग का नाम ही भक्ति है । इन दोनो तत्वों का समन्वय हम कबीर और रविदास की वाणी में एकत्र देख सकते हैं:–

संत कबीर ने बड़े ही स्पष्ट शब्दों में इसी मूल मंत्र को निम्नलिखित पद में अक्षरशः उत्तर दिया है

पढ़ पढ़ कर पत्थर भये, लिख लिख हो गए ईंट। [9]
कबीरा अन्तर प्रेम की, लगी न एको छींट ।।
र र र र र र र
गुरू मुख गुरू चितवत रहे, जैसे चन्द चकोर ।
आठ पहर निरखत रहे, गुरू मूरत की ओर ।।

संत कबीर और रविदास वाणी में सम्पूर्ण आत्मसमर्पण, अहैतुक प्रेम व अनन्य भाव दिखाई देता है जो भक्ति की चरम परिणति का आधार है । इसी लिए ही कबीर एक पद में भक्ति की चरमावस्था में पहुॅचकर गाने लगते हैं –

कहै कबीर मैं तन मन जारया ।
साहिब अपना छिन न विसारया ।।

संत रविदास तो उनसे भी आगे निकल जाते हैं तथा कई रूपकों से अपने और ईश्वर में सम्बंध बनाकर भक्ति में तल्लीन हो जाते हैं –

प्रभु जी ! तुम चंदन हम पानी, जाकी वास अंग अंग समानी । [10]

संत कबीर और रविदास की भक्ति उत्तम श्रेणी की है निस्वार्थ भाव की है । आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी कहते हैं –

यही है वह पूर्ण तन्मयता, अहैतुक प्रेम, अनन्य परायण विश्वास और एकान्त निष्ठा जो भक्ति की एक मात्र शर्त है । कबीर निस्सन्देह ऐसे भगवान को मानते थे जो द्वन्द्वातीत है, पक्षातीत है, द्वैता द्वैत– विलक्षण है,त्रिगुण रहित है, अकथ है, अतीत है । कबीर की भक्ति और भगवद् भावना में न तो युक्ति से विरोध है न शास्त्र से । [11]

संत कबीर और रविदास प्रारभिक अवस्था में भोग मार्ग की और झुके प्रतीत होते हैं । परन्तु बाद में जब गुरू रामानन्द के प्रभाव में आए तब से उन्होंने सहज समाधि की दीक्षा ली ऐसा प्रतिभासित होता है । उन्होंने आंख मूंदने और कान रुंधने के झंझट से मुक्ति पाने के लिए भोग मार्ग को नमस्कार कर दिया । डां. हजारी प्रसाद द्विवेदी भी इसी मत को पुष्ट करते हुए अपने ग्रन्थ कबीर में इसी प्रकार के भाव व्यक्त करते हुए कहते हैं कि संत कबीर ने मुद्रा और आसन की गुलामी को सलामी दे दी । उनका चलना ही परिक्रमा हो गया , काम काज ही सेवा हो गए । [12]

कबीर द्वैत अद्वैत में, फंसा पड़ा संसार।
साधु ऐसा चाहिए, सिर लेवे न भार ।।
अद्वैत भया तो क्या भया,अद्वैत मांगे ठौर ।
द्वैत अद्वैत से न्यारा रहे, साधु कोर और ।।

संत कबीर और संत रविदास वाणी में सतगुरू की महिमा का वखान सन्त परम्परा के अनुरूप दिखाई देता है । कबीर ने गुरू महिमा का वर्णन पूर्ण निष्ठा से किया है –

सतगुरू की महिमा अनंत, अनंत किया उपकार ।
लोचन अनंत उघारिया, अनंत लखावनहार ।।

संत रविदास ने तो नत– मस्तक होकर गुरू की महिमा का गान किया है –

गुर प्रसाद भई अनभै मति, विष अमित सम ध्यावैगा । [13]
कह रविदास भेंटि आपा पर, वा ढौरहिं पावेगा ।।

संत कबीर गुरू को जॉच परख कर अपनाने के पक्ष में हैं । गुरू का चयन सावधानी पूर्वक होना चाहिए अन्यथा भक्त को सही रास्ता नहीं मिल पाएगा –

सतगुरू की पहचान यह उपरित प्रेम विचार ।
वीत राग निर्पक्षता, हठ से रहित विकार ।।

प्रेमाभक्ति का उल्लेख करते हुए दोनों सन्त इसे खण्डे की धार पर चलने के समान कहते हैं, यह कोई खाला का घर नहीं है–

यह तो घर है प्रेम का, खाला का घर नाहिं । [14]
शीश उतारे भुई धरै, तव पैठे घर मांहि ।।
प्रेम न वाडी उपजै, प्रेम न हाट विकाय । [15]
राजा प्रजा जेहि रूचे, शीश दिए ले जाय ।।

शंकराचार्य ने अद्वैत वेदान्त की चर्चा में योगदर्शन में सुख को राग या मोह का अनुयायी कहा है, इन्हीं रागों से मुक्त होने को वैराग्य कहा जा सकता है । सभी संतों ने लगभग इसे अपने दर्शन में समाहित किया है । संत रविदास और कबीर इसके अपवाद नहीं हैं । कबीर ने तो इसका जोरदार समर्थन किया है । वे सांसारिक रिश्ते नातों को झुठा समझते थे इसलिए उन्होंने भौतिक सुखों व इन रिश्तों के त्याग की बात कही है–

न कोई बंधु न भाई साथी,बांध रहे तुरंगम हाथी । [16]
मैडी महल बाबडी छाजा , छड़ि गये सब भूपति राजा ।।
कहै कबीर राम लौं लाई,धरी रही माया काहू खरि ।।
संत रविदास वाणी में भी इसी तरह के भाव मिलते हैं ।
थोथी काया थोथी माया,थोथा हरि विन जनम गंवाया । [17]
थोथा पण्डित थोथी वाणी, थोथी हरि विन सबै कहानी ।।

संतो ने संसार को मिथ्या व क्षणिक माना है । इसलिए संसार के प्रति अनास्था का भाव प्रायः सभी संतों की वाणी में मिलता है । शंकराचार्य के अद्वैत दर्शन का प्रभाव यहां परिलक्षित होता है । क्योंकि कबीर एवं रविदास वाणी में जगत को मिथ्या एवं नश्वर कहा है –

संत कबीर के पद को देखिए–

कबीर कहा गरवियो, इस जीवन की आस । [18]
टेसू फुले दिवस चार, खंखर भये पलास ।
यह ऐसा संसार है, जैसा सैवंल फूल ।
दिन दस के व्योहार में, झूठे रंगि न भूल ।।
संत रविदास वाणी में भी इसी तरह भाव मिलते हैं –
जैसा संग कसुंभ का, तैसा यहु संसार रे । [19]
रमइया रंग मजीठ का, भणै रविदास विचार रे ।।
तथा– यहु संसार सघन बन विष कौ, ता मैं बहु दुख दन्द व्यालाई ।
रूप रवण के उनमुषि मानुषा, पंतग पड़े जिमि आई ।। [20]

संसारिक मोह माया के प्रति वैराग्य का भाव उत्पन्न करने के लिए इन्द्रिय निग्रह अथवा नियन्त्रण या शमन आवश्यक है । शंकराचार्य

ने भी लगभग यही भाव अद्वैत दर्शन में व्यक्त किए हैं । संत कबीर और रविदास ने इन्द्रिय निग्रह पर बल दिया है –
शरीर के पो कागज़ की नाव के रूप में स्वीकार किया गया है । संसार रूपी सागर में शरीर नौका तैर रही है व इसमें पांच दुष्ट ;विकार एक साथ बैठे हैं । इनसे बचना कठिन है –

कागद केरी नांवरी,पाणी केरी गंग । [21]
कहै कबीर कैसे तिरूं,पंच कुसंगी संग ।।

पंच विकारों की चर्चा संत रविदास वाणी में प्रायः सर्वत्र है–

देव! संसै गाढ़ि न छुटैं ।।
काम कोध माया मद मत्सर, इन पंचहु मिलि लूटैं । [22]

इन्द्रियों के निग्रह के साथ साथ सहनशीलता को भी उन्होंने अपनी भक्ति पद्धति में सम्मिलित किया है । सुख–दुख में सम भाव व भक्ति मार्ग पर घोर कष्ट सहते हुए भी अडिग रहना, यही संत भाव है । संतों ने माया को मोक्ष प्राप्ति में बाधा बताया है । संत कबीर कहते हैं–

कबीर माया पापणी ,फंद लै बैठि हाटि । 23
सब जग तो फंदे पड़या, गया कबीर काटि ।।
कबीर माया पापणी,हरि सूं करै हराय ।
मुखि कड़ियाली कुमति, को कहन न देई राम ।।

संत रविदास ने भी माया विषयक यही भाव व्यक्त किए हैं –

वरजि हो वरजि बीठले माया जग खाया । [24]
महा प्रबल सब ही बसि कीये,सुरनर मुनि भरमाया ।।
बालक विरध तरून अति सुन्दरि, नाना भेष वणाया ।
जोगी जती तपी सन्यासी, पंडित रहया न पाया ।।
बाजीगर की बाजी कारनि, सब को कोतिग आवै ।
जो देखे सो भूलि रहे, बाका चेला मरम जु पावैं ।।

भक्ति का मूल मंत्र संतों की पद्धति में नाम–जाप ही है । इस गूढ़ नाम के विषय में कबीर एवं संत रविदास ने नाम स्मरण को अपनी भक्ति का मूल मंत्र माना है । पर यह नाम स्मरण वस्तुतः है क्या इस विषय में कबीर का पद देखिए–

राम राम सब कोई कहे, नाम न चीन्हे कोय । [25]
नाम चीन्हे सतगुरू मिले, नाम कहावे सोय ।।
तंत्र मंत्र सब झूठ है, मत भरमों संसार ।
सार शब्द जाने बिना, कोइ न उतरसी पार ।।

संत रविदास ने भी नाम–महिमा का प्रतिपादन बड़े ही सुन्दर शब्दों में किया है –

अन्तर्मुखी मइ जउ करहिं, संत नाम करि जाप । [26]
रविदास तिन्ह सौ भजहुहिं, जगतह तीन्हहु ताप ।।

संत कबीर और रविदास के अनुसार आज का विश्व अपनी कुंठाओं व विषमताओं को त्याग सकता है । आज का युग केवल बुद्धि को सर्वोपरि मानकर चलता है व ह्रदय पक्ष को विल्कुल बिसरा देता है जिससे स्वस्थ जीवन का सर्वांगीण विकास नही हो पाता । संत कबीर और रविदास ने बुद्धि और ह्रदय पक्ष के समन्वय पर जोर दिया है, जिससे संसार विश्व बन्धुत्व के सिद्धान्त पर चलकर राम राज्य की स्थापना करे । इन संतों ने अपने विचारों से सर्वे भवन्तु निरामयाः, सर्वे भद्राणी पश्यन्तु या कश्चिद् दुख भाग् भवेतः की भावना से समग्र सृष्टि को भरने का प्रयास किया है ।।

सदर्भ सूची

1. कबीर वाणी सुधा सुधार – पृ. 31 अशोक प्रकाशन द्वारा कृष्ण देव शर्मा
2. कबीर वाणी सुधा सुधार – पृ. 31 अशोक प्रकाशन द्वारा कृष्ण देव शर्मा
3. कबीर वाणी सुधा सुधार – पृ. 31 अशोक प्रकाशन द्वारा कृष्ण देव शर्मा
4. संत कबीर वाणी पारस नाथ तिवारी पृ. 74
5. रविदास दर्शन पृ.67
6. कबीर वाणी सुधा सुधार – डा.कृष्ण देव शर्मा पृ. 32
7. कबीर वाणी सुधा सुधार – डा.कृष्ण देव शर्मा पृ. 32
8. कबीर वाणी सुधा सुधार – डा.कृष्ण देव शर्मा पृ. 32
9. कबीर वाणी सुधा सुधार – डा.कृष्ण देव शर्मा पृ. 32
10. संत रविदास वाणी डा. वी. पी. शर्मा पृ. 96 पद 66
11. कबीर –पृ.151 डा. हजारी प्रसाद द्विवेदी
12. कबीर –पृ.151 डा. हजारी प्रसाद द्विवेदी
13. संत रविदास वाणी पद पृ. 75
14. कबीर वाणी –डा. पारस नाथ तिवारी पृ. 176 दोहा –47
15. कबीर वाणी –डा. पारस नाथ तिवारी पृ. 176 दोहा –48
16. कबीर वाणी सुधा सुधार डा. कृष्ण देव पृ. 35
17. संत रविदास वाणी – डां.वी पी शर्मा पृ. 109 पद 97
18. संत रविदास वाणी – डां.वी पी शर्मा पृ. 109 पद 173
19. कबीर वाणी सुधा सुधार – डा. कृष्ण देव पृ. 36
20. संत रविदास वाणी – डा. वी. पी शर्मा पृ. 74 पद सं–15
21. कबीर वाणी सुधा सार –डा. कृष्ण देव पृ. 36
22. संत रविदास वाणी –डा. वी. पी शर्मा पृ. 30
23. कबीर वाणी – पारस नाथ तिवारी पृ. 37
24. रविदास दर्शन – पृ. 66
25. कबीर वाणी – पारस नाथ तिवारी पृ. 37
26. रविदास दर्शन – पृ. 66